तुलसीदास के पद

1) जाऊं कहां तजि चरन तिहारे

व्याख्या:- प्रस्तुत पद में कवि ने ईश्वर के प्रति आस्था प्रकट किया है। ईश्वर के सिवाय उसे किसी अन्य के ऊपर अब विश्वास नहीं है क्योंकि इन सांसारिक वस्तुओं के प्रति विश्वास करके ही तो वह नाना प्रकार के कष्टों को सह रहा है। इस संसार में पापियों का उद्धार करने वाले सिर्फ श्रीराम है। अतः इसी से उस भगवान को पतित पावन कहा जाता है, क्योंकि भगवान ही निस्वार्थ भाव से भक्तों की सेवा करते हैं। भक्तों को केवल अपने आराध्य देव श्री राम के ऊपर विश्वास है। कवि कहते हैं हम लोग अपना उद्धार इसलिए नहीं कर पाते हैं कि इस संसार में आकर हम माया के वशीभूत होकर अपने को ही सर्वस्व समझकर ईश्वर को खो बैठते हैं। इस नश्वर संसार में बिना ईश्वर की कृपा के किसी का भी उद्धार होना संभव नहीं है। कवि का विचार है कि हम माया के भ्रम जाल में पड़कर इस धरती में नाना प्रकार के कष्टों को भोग रहे हैं। आत: हमें अपना उद्धार करने के लिए माया से मुक्त होना होगा।

कवि भगवान की वंदना करते हुए कहता है कि हे ईश्वर अब आपके चरणों से दूर मैं नहीं जा सकता। अब आपके चरणों को छोड़कर और कहीं जाने की हमारी इच्छा भी नहीं है। कवि का कथन है कि इस पृथ्वी पर दीन-हीन जनों का जितना उद्धार श्रीराम ने किया है उतना कोई नहीं कर पाया। भक्त श्री राम के चरणों की आराधना को छोड़कर और किसी भी किसी की भी आराधना नहीं करना चाहता। क्योंकि श्री रामचंद्र जी ही इस विश्व में पापियों का उद्धार करने वाले हैं। तुलसीदास कहते हैं अन्य कौन देवता है जिसने अपने यस के लिए ढूंढ ढूंढ कर पतितों का उद्धार किया है। पतितो का उद्धार करने वाले तथा दीनों को गले लगाने वाले केवल आप ही हैं। अतः आप को त्याग कर अन्यत्र जाना सर्वथा मूर्खता होगी। इसी से उन्हें पतित पावन कहा जाता है। और दिनों के ऊपर वही कृपा दृष्टि रखने वाले हैं। श्रीराम ने मनुष्यों का तो उद्धार किया ही है, पक्षी हिरण, बहेलिया, वृक्ष, जड़, पत्थर, आदि का भी उद्धार किया है। जितने लोगों को भगवान श्रीराम ने परम गति प्रदान की है। अन्य कोई देवता इतना नहीं कर सके। क्योंकि सबका उद्धार करना श्री राम को छोड़कर और किसी के बस की बात नहीं। अंत में कवि कहता है कि इस नश्वर संसार में देवता, मानव-दानव आदि सभी लोग माया के वश में पढ़कर चक्कर काट रहे हैं। आत: हम स्वत: माया के वश में होकर अपना उद्धार कर पाने में असमर्थ है, तो भला दूसरों का कल्याण कैसे कर सकते हैं। अतः अपने स्वार्थ में लीन लोगों के सामने भक्त आत्मसमर्पण नहीं करता। इस संसार रूपी भवसागर से मुक्ति प्राप्त करने के लिए हमें भगवान के चरणों पर अपने आप को सर्वस्व न्योछावर कर देना चाहिए क्योंकि बिना परमपिता परमेश्वर की सहायता से हमारा उद्धार संभव नहीं है।

इस पद में 'व्याध' महर्षि वाल्मीकि के लिए। 'पाषाण' अहिल्या के लिए, 'विटप' यमलार्जुन नामक वृक्ष के लिए, और 'पक्षी' जटायु के लिए प्रयुक्त हुआ है। इस पद में अवधी भाषा की सुंदर शब्दावली का प्रयोग हुआ है। पद में निहित जटायु, मारीच, व्याध, अहिल्या आदि की अंतर कथाएं हैं। पद में अनेक स्थलों पर अनुप्रास अलंकार की सुंदर योजना हुई है। शांत रस में कवि का भक्ति निवेदन हुआ है।

2) अबलौं नसानी अब न नसैहो

प्रस्तुत पंक्तियां तुलसीदास द्वारा रचित विनय पत्रिका से ली गई है

तुलसीदास कहते हैं कि अब तक तो मैंने अपना जीवन सांसारिक विषय भोगों में नष्ट किया। किंतु अब आगे से ऐसा नहीं होगा। अब अपने जीवन में भगवत भक्ति को छोड़कर अन्य कोई कार्य नहीं करूंगा। तुलसीदास कहते हैं अब तक तो मेरी करनी बिगड़ चुकी पर अब आगे से मैं संभल जाऊंगा। रघुनाथ जी की कृपा से संसार रूपी रात्रि बीत चुकी है। अब जागने पर फिर कभी बिछौना नहीं बिछाऊँगा। अर्थात सांसारिक मोह माया में नहीं पड़ुंगा। कवि कहना चाहते हैं कि अब तक मैं अज्ञानता में फंसकर अपने जीवन के बहुमूल्य समय को नष्ट किया है। अब मैंने निश्चय कर लिया है कि अपने भविष्य को भगवान के चरणों में व्यतीत कर लूंगा। श्री रामचंद्र की कृपा के कारण ही मैं सांसारिक मोह माया से छुटकारा प्राप्त कर सका हूं। अब मैं पुनः मोह रात्रि में फंसकर सोने की कोशिश नहीं करूंगा क्योंकि मैं इस सांसारिक आकर्षण के मायाजाल से ईश्वर की दया के कारण ही

मुक्त हो सका हूं। अब मुझे श्रीरामनाम रूपी सुंदर चिंतामणि प्राप्त हो चुका है। अब मैं इस अमूल्य मणि को हृदय और हाथ से कभी खोने नहीं दूंगा। क्योंकि संसार में मुक्ति भगवान के अलावा कोई और नहीं दे सकता। जिस प्रकार सोने की शुद्धता कसौटी पर कसकर की जाती है। उसी प्रकार मैंने अपने मन की चित्तवृत्तियों के निरोध की जांच श्री राम रूपी कसौटी पर रखकर करूंगा। क्योंकि बिना इन चित्तवृत्तियों पर विजय प्राप्त किए ईश्वर के नजदीक तक नहीं पहुंचा जा सकता। भक्त तुलसीदास अपनी गलती स्वीकार करते हुए कहता है कि अब तक मैं अज्ञान बस इन इंद्रियों के भ्रम जाल में उलझा रहा, अर्थात मैंने अब तक सांसारिक भोग विलास में तल्लीन होकर अपने को ईश्वर से दूर रखा। इतना अमूल्य समय व्यर्थ बर्बाद हो जाने से मुझे कष्ट है। अतः अब वह अपने को सांसारिक भोग विलास से दूर रखने की प्रतिज्ञा करता है। क्योंकि सांसारिक विषय वासनाओं से दूर रहकर ही ईश्वर का सानिध्य प्राप्त किया जा सकता है। कवि अपने को श्री राम की भक्ति में ही लगाने की कामना व्यक्त करता है। जिस प्रकार भ्रमर अपने को कमल के पुष्प पर समर्पित कर देता है उसी प्रकार कवि अपने मन रूपी भ्रमर को श्री राम की भक्ति में समर्पित कर देना चाहते हैं।

इन पंक्तियों में तुलसीदास ने सांसारिकता को रात कहा है। जिस प्रकार रात में अंधकार का राज्य होता है और लोग निद्रा में डूबे रहते हैं। उसी प्रकार संसार की जड़ता ही अंधकार में है। इस अवस्था में लोग मोह निद्रा में डूबे रहते हैं। परंतु कवि को ईश्वर भक्ति से सत्य का ज्ञान हो गया है। अब मोह निद्रा में नहीं पड़ेगा। इस स्थिति को वह भव नीशा सिरानी करता है। चिंतामणि एक ऐसी मणि है जिसे प्राप्त कर लेने पर मनुष्य को कभी किसी अन्य वस्तु की चिंता नहीं रह जाती। यहां कवि श्री राम को ही चिंतामणि कहा है। यह दुर्लभ नाम उसे प्राप्त हो गया है। इसे वह अपने हृदय में ग्रहण कर चुका है। अब उसे संसार की अन्य वस्तु की चिंता नहीं रह गई है। श्री राम के सुंदर, श्याम, स्वरूप और रूप को ही कसौटी कहा गया है। जिस पर भक्त अपने हृदय कंचन को कस कर उसे शुद्ध करने का संकल्प करता है। रूपक एवं अनुप्रास अलंकार की सुंदर योजना हुई है।

3) "ऐसी मूढ़ता या मन की..... कृपानिधि जानत ही गति मन की।"

प्रस्तुत पद तुलसीदास द्वारा रचित विनय पत्रिका से लिया गया है। इस पद में तुलसीदास अपने मन की मूढ़ता का वर्णन करते हुए श्री रामचंद्र जी से अपने दु:सह दुख दूर करने की प्रार्थना करते हैं ।

प्रस्तुत पंक्ति के माध्यम से तुलसीदास जी कहते हैं कि हे प्रभु इस मन की मूर्खता देखिए वह राम भक्ति को छोड़कर संसार की माया में डूबा हुआ अपना जीवन नष्ट करता रहता है, लेकिन उसे कुछ मिलता नहीं है। भगवान की शरण में जाने से ही उसका उद्धार हो सकता है। प्रस्तुत पद में इसी सत्य का पल्लव लिया गया है।

कवि तुलसीदास कहते हैं कि हे प्रभु मेरे मन की मूर्खता को तो देखिए मैंने राम भक्ति रूपी गंगाजल को त्याग दिया और ओस के कणों से अपने प्यास को बुझाने चला। जिस तरह से उसके कणों से कभी प्यास नहीं बुझ सकता। ठीक उसी तरह तात्कालिक सुखों से हमें सच्चे सुख की प्राप्ति नहीं हो सकती। जैसे एक चातक पक्षी धुएं के समूह को देखता है और वह भ्रम वस उसकी ओर बढ़ता है। वह अपने प्यास को बुझाना चाहता है। लेकिन उसकी प्यास तो बुझती नहीं। न तो उसे वहां जल ही मिलती है और न ही उसे ठंढक की ही प्राप्त होती है। अपितु उसके आंखों को ही कष्ट झेलना पड़ता है। क्योंकि वह धुएं का फव्वारा था। इसे वह बादल समझकर गया था। इसी प्रकार बाज पक्षी एक शीशे के फर्स में अपनी परछाई को देखता है और उसे दूसरा बाज समझ कर उस पर भूख के कारण टूट पड़ता है। उसको अपना मुख टूटने की भी स्मृति नहीं रहती। उस पर बार -बार प्रहार करने के कारण उसकी चोंच घायल होकर टूट जाते हैं। इस तरह न तो उसकी भूख ही मिटती है। वल्कि उसकी स्वयं की छती हो जाती है। इस तरह से तुलसी दास जी कहते हैं हम जिसे सच्चा सुख समझते हैं। हम जिसकी ओर लालाइत होकर जाते हैं उससे हमें कोई सुख नहीं मिलता। अपितु हमें वहां केवल कष्ट ही कष्ट मिलते हैं। तुलसीदास जी कहते हैं हे कृपालु प्रभु! मैं अपनी कूचालों का कहां तक वर्णन करूं। आप तो अंतर्यामी है। सबके मन की गति को जानते हैं। हमारी भी मन गति को आप जानते हैं। आप अपने भक्त की लाज रख लीजिए। और मेरे समस्त दुसह दुख को दूर कर दीजिए।

इस पद में अज्ञानता जन्य व्यवहार के उदाहरण प्रस्तुत करके गोस्वामी जी ने यह दिखलाया है कि हम स्वार्थ सिद्धि हेतु जो कार्य करते हैं उसमें हमें सदा हानि ही उठानी पड़ती है। राम भक्ति में सूर सरिता का आरोप होने से रुपक अलंकार का आयोजन हुआ है। धूम समूह में बादल की भ्रांति होने से भ्रांतिमान अलंकार का प्रयोग हुआ है।

4) "ऐसे को उदार जग माहीं।"

क प्रस्तुत पाद तुलसीदास कृत विनय पत्रिका से ली गई है श्रीराम के आनंद भक्त है उन्होंने इस अंश में राम की महिमा का गुणगान क्या है करते हुए राम की कृपा दृष्टि तथा दयालु सा को उजागर किया है वह कहते हैं कि इस जग में राम के समान उदार दूसरा कोई और नहीं है जो बिना सेवा के ही दिन पर द्रवित होकर उनकी सहायता करने के लिए तत्पर हो जाते हैं बिना किसी आशा की कृपा करने वाले तो परमात्मा श्रीराम ही है

तुलसीदास की कहते हैं संसार में ऐसा उदार दूसरा कौन है जो बिना सेवा की दीन जनों पर कृपा करते हैं। उन्हें निहाल कर देते हैं। जिस परम गति मुक्ति को पाने के लिए बड़े-बड़े मुनि, तत्वज्ञानी योग वैराग्य आदि अनेक साधन करके भी प्राप्त नहीं कर पाते। उसे प्रभु श्री राम मृत पड़े गले पदार्थ खाने वाले गिद्ध और जंगली सबर जाती की शबरी तक को बड़े ही विनम्रता के साथ दे देते हैं। और उसे देकर अपने मन में कुछ भी बहुत नहीं मानते। उसे थोड़ा ही समझते हैं। रावण ने शिवजी को अपने दस सिर अर्पित कर उनसे जो धन संपदा प्राप्त की थी। श्री राम ने बड़े संकोच के साथ बीना किसी अभीमान के विभीषण को दे दी। संकोच इसलिए हुआ कि मैंने इसे कुछ भी नहीं दिया। लंका का राज्य तो इसी का था। उसका उत्तराधिकारी कभी न कभी तो होता ही। तुलसीदास जी कहते हैं रे मन यदि तू सब प्रकार से सुख चाहता है। तो श्रीराम का भजन कर। कृपा सिंधु प्रभु रघुनाथ तेरे मन की सारी कामनाएं पूर्ण करेंगे। उनकी सरण में जाने से ही सारे मनोरथ पूर्ण हो जाएंगे।

श्रीराम जैसा उदार दूसरा कोई नहीं है। बिना सेवा के बिना किसी बदले की आशा के जो कृपा की जाती है। वही सबसे बड़ा कृपालु है निष्कारण कृपा करने वाला अहैतुक प्रेम करने वाला तो एक ही श्रीराम हैं। जिस मुक्ति को जानी और मुनि योग और वैराग्क द्वारा पाना चाहते हैं। श्रीराम वह गती गिद्ध (जटायु) और शबरी को यूं ही दे देते हैं। विभीषण सरीखे व्यक्ति को अपनी तरफ से कुछ न दे पाने पर राम को संकोच होता है। जीवन में कष्टों को दूर करने के लिए एकमात्र उपाय श्रीराम है। जिसका मनन करने से सारी मनोकामनाएं पूर्ण होती है और सब सुख की प्राप्ति होती है।

5) "जाकै प्रिय न राम वैदेही।"

प्रस्तुत पद में तुलसी दास जी कहते हैं कि जिन्हें राम और सीता प्रिय नहीं है। उन्हें चाहे कोई जितना भी प्रिय क्यों न हो, अपना दुश्मन समझ कर उसका त्याग कर देना चाहिए। कुछ उदाहरण के साथ तुलसीदास अपने मत को सिद्ध करते हैं। जब अपनी भक्ति का विरोध करने के कारण भक्त प्रहलाद ने अपने पिता हिरण्यकषिपु का बहिष्कार किया। विभीषण ने अपने बड़े भाई रावण का इसलिए त्याग कर दिया क्योंकि वे राम के विरोधी थे। राम को बनवास दिलाने वाली भरत की माता कैकेयी थी वह राम विरोधी थी इसलिए भारत ने अपनी माता कैकेयी का त्याग कर दिया।

राजा बली ने अपने गुरु का परित्याग कर दिया।गोकुल की गोपियों ने कृष्ण के प्रेम में अपने पतियों को परित्याग कर दिया। उन सभी ने अपने प्रियजनों को छोड़ा और उनका कल्याण ही हुआ। राम के साथ प्रेम का नाता सबसे बड़ा नाता या संबंध है। उनसे जितना प्रेम कर सकते हो करो, उनकी जितनी सेवा कर सकते हो करो। ऐसे सुरमे को आंख में लगाने से क्या लाभ जिससे आंख ही फूट जाए। इसलिए राम और सीता के विरोधी व्यक्तियों से प्रेम करने से हानि होती है। तुलसीदास जी कहते हैं कि और अधिक क्या कहें। उनकी यह सम्मति है कि जितना स्नेह राम से रखना चाहिए जिसका संबंध राम से है जो राम का सनेही है उसका सब भाँति मंगल होता है। इसलिए राम की भक्ति करनी चाहिए और जो राम का विरोधी है, जो उनकी भक्ति के मार्ग का बाधक है उनका त्याग कर देना चाहिए। तुलसीदास राम के साथ-साथ सीता माता के गुणों पर सी प्रकाश डालते हैं उनका कहना है कि जिनके मन में श्रीराम और माता सीता के प्रति स्नेह नहीं है वह भले ही कितनी प्रिय क्यों न हो उनका त्याग द कर देना चाहिए। जैसे प्रहलाद ने अपने पिता का, विभीषण ने अपने भाई का, है भारत ने अपनी मां का, राजा बली ने अपने गुरु का, व्रज की गोपियों ने अपने पतियों का परित्याग कर दिया। उसी प्रकार सीताराम से जो प्रेम नहीं करते चाहे वह कितना ही प्रिय क्यों ना हो उस का त्याग कर देना चाहिए। जिनके मन में राम सीता के प्रति स्नेह होगा उनसे ही हमारा बंधुत्व हो सकता है।

इस पद में तुलसीदास ने राम सीता के प्रति अपने अटूट भक्ति भावना को प्रदर्शित किया है